राष्ट्र निर्माण में डॉ. अंबेडकर के शिक्षा-दर्शन की प्रासंगिकता

दिव्यांशु पटेल *

भारतीय गणराज्य का स्वरूप कैसा हो और वह किस तरह भारतीय नागरिकों के जीवन में लोकतंत्र, समानता और बंधुत्व जैसे मूल्यों को बढ़ावा देगा, यह तय करने में डॉ. अंबेडकर की महती भूमिका रही है। उनकी जयंती के एक सौ पच्चीसवें वर्ष में यह आवश्यक हो जाता है कि उनके भारतीय राष्ट्र निर्माण में दिए गए योगदान व दर्शन को नए नज़रिए से देखा व समझा जाए। इस लेख का यही प्रयास है कि बाबा साहब के शिक्षा व लोकतंत्र संबंधी विचारों का विवेचन करते हुए डॉ. अंबेडकर के शिक्षा-दर्शन के महत्व को रेखांकित किया जाए।

जीवन परिचय

प्रखर विचारक व भारत के संविधान के निर्माता बाबा साहब डॉ. भीमराव अंबेडकर भारतीय सामाजिक-राजनीतिक आन्दोलन के ऐसे पुरोधा रहे हैं, जिन्होंने पूरा जीवन समाज के वंचित वर्गों के हक और सम्मान के लिए समर्पित कर दिया। डॉ. अंबेडकर का जीवन, संघर्ष और परिश्रम की वह गाथा है जिससे हर भारतीय प्रेरणा ले सकता है। डॉ. अंबेडकर के चिंतन और विचारों का सबसे उज्ज्वल पक्ष यही है कि भारतीय समाज में व्याप्त सामाजिक भेदभाव से जूझते हुए अपना प्रारंभिक जीवन बिताने वाले बाबा साहब अंबेडकर ने भारत को समानता का दर्शन दिया। वर्तमान वर्ष डॉ. अंबेडकर के जयंती का एक सौ पच्चीसवाँ वर्ष है, जिसके उपलक्ष्य में भारत सरकार द्वारा विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं, अतः यह समीचीन है कि डॉ. अंबेडकर के विचारों और उनके दर्शन का समाज और शिक्षा के संदर्भ में विवेचन किया जाए ताकि समाज को उनके वैचारिक दर्शन के प्रत्येक पहलू के विषय में पर्याप्त जानकारी मिल सके।

बाबा साहब डॉ. अंबेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 को मध्य प्रदेश स्थित महू छावनी में रामोजी

* *शोधार्थी,* समाजशास्त्र विभाग, जे.एन.यू., नयी दिल्ली 110067

सकपाल व भीमाबाई के घर हुआ था। बाबा साहब को समाज में फ़ैली सामाजिक कुरीतियों के नाते बचपन में अनेक प्रकार के भेदभावों का सामना करना पड़ा था। प्रारंभिक शिक्षा में आने वाली समस्याओं से जूझते हुए बाबा साहब जब उच्च शिक्षा के लिए संघर्ष कर रहे थे, तब प्रगतिशील विचारक एवं पूर्णरूप से मानवतावादी बड़ौदा के महाराज सयाजी गायकवाड़ ने डॉ. अंबेडकर को उच्च शिक्षा हेतु तीन साल तक छात्रवृत्ति प्रदान की, किंतु उनकी शर्त थी की अमेरिका आने पर दस वर्ष तक बड़ौदा राज्य की सेवा करनी होगी। डॉ. अंबेडकर ने कोलंबिया विश्वविद्यालय से परास्नातक की और उसके बाद डॉक्टरेट की डिग्री हासिल की। “भारत का राष्ट्रीय लाभ” विषय पर शोध करने वाले डॉ. अंबेडकर की विलक्षण तर्क क्षमता और विश्लेषण को तमाम विख्यात विद्वानों ने सराहा था। इस शोध के कारण उनकी बहुत प्रशंसा हुई। चार वर्ष पूर्ण होने पर जब भारत वापस आए तो बड़ौदा में उन्हें उच्च पद दिया गया, किंतु कुछ सामाजिक विडंबना की वजह से एवं आवासीय समस्या के कारण उन्हें नौकरी छोड़कर बम्बई जाना पड़ा। डॉ. अंबेडकर बम्बई में सीडेनहम कॉलेज में अर्थशास्त्र के प्रोफ़ेसर नियुक्त हुए और अपने अर्थशास्त्र संबंधी ज्ञान और भारत की आर्थिक समस्याओं पर मौलिक दृष्टिकोण के नाते ख्यातिलब्ध होते रहे। उनका दृढ़ विश्वास था कि मन के हारे हार है, मन के जीते जीत। 1919 में वे पुनः लंदन चले गए और वहाँ से कानून की डिग्री प्राप्त की।

डॉ. अंबेडकर ने भारत में वकालत का अभ्यास 1923 में प्रारंभ किया और शीघ्र ही अपने कड़े परिश्रम से अर्जित ज्ञान और तर्कों के नाते भारत के एक प्रतिष्ठित बैरिस्टर के रूप में प्रसिद्ध हो गए। डॉ. अंबेडकर कानून की डिग्री और वकालत के पेशे को गरीबों व शोषितों के अधिकारों के लिए लड़ने हेतु एक ज़रिया मानते थे और अपनी पैरवी में इन वर्गों को न्याय दिलाने के लिए अथक प्रयास करते थे। कानून के अपने मर्मस्पर्शी ज्ञान के नाते ही उन्हें स्वतंत्र भारत की पहली कैबिनेट में कानून मंत्री का पद दिया गया। कानून मंत्री रहते हुए उन्होंने महिलाओं की उन्नति और अधिकारों के लिए हिन्दू कोड बिल सदन के पटल पर रखा था, जिसका विरोध प्रतिक्रियावादियों द्वारा अत्यंत उग्र तरीके से करने के कारण यह बिल उस समय पास नहीं हो सका था और बाबा साहब डॉ. अंबेडकर ने नारी अधिकारों के लिए अपने मंत्री पद से तत्काल इस्तीफ़ा दे दिया था, यह घटना दर्शाती है कि डॉ. अंबेडकर अपने ज्ञान और उपाधियों को समाज हित के लिए मानते थे, न कि व्यक्तिगत पद प्रतिष्ठा के लिए।

अनेक कष्टों को सहन करते हुए, अपने कठिन संघर्ष और कठोर परिश्रम से उन्होंने प्रगति की ऊँचाइयों को स्पर्श किया था। डॉ. अंबेडकर की विद्वता का सम्मान करते हुए तथा तत्समय सबसे अधिक अकादमिक योग्यता रखने वाले विद्वान के नाते बाबा साहब को संविधान निर्माण की सबसे महत्वपूर्ण समिति, प्रारूप समिति का अध्यक्ष चुना गया। प्रारूप समिति का अध्यक्ष रहते हुए बाबा साहब अंबेडकर ने समिति के अन्य सदस्यों की शंकाओं और आपत्तियों का जिस तार्किक पद्धति और बिना किसी पूर्वाग्रह के समाधान प्रस्तुत किया उससे उनकी विद्वता की ख्याति पूरे देश में फ़ैल गई।

भारतीय समाज का स्वरूप स्वतंत्रता मिलने के बाद कैसा हो, वो किस रूप में विश्व पटल पर अपनी पहचान बनाए, इस संबंध में बाबा साहब के दर्शन की झलक संविधान में स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है। समाज के वंचित वर्गों के लिए विशिष्ट अवसर सिद्धांत, सार्वभौमिक शिक्षा को राज्य की ज़िम्मेदारी बनाना, कानून के समक्ष सभी को समान घोषित करना आदि ऐसे प्रावधान हैं जिन्होंने भारत में न केवल लोकतंत्र को मज़बूत किया, बल्कि भारत को एक प्रगतिशील राष्ट्र की छवि निर्मित करने में भी मदद की।

निरंतर अथक अध्ययन व समाज सेवा में रत बाबा साहेब डॉ. अंबेडकर सन् 1948 में मधुमेह रोग से पीड़ित हो गए। जून से अक्तूबर 1954 तक वो बहुत बीमार रहे, इस दौरान वो नैदानिक अवसाद और कमज़ोर होती दृष्टि से भी ग्रस्त रहे। अपनी अंतिम कृति बुद्ध व उनका धम्म पूरा करने के बाद 6 दिसंबर 1956 के दिन भारतीय समाज में समानता की अलख जगाने वाले, देश को एक सर्वमान्य संविधान प्रदान करने वाले बाबा साहब डॉ. भीम राव अंबेडकर का महापरिनिर्वाण हो गया।

डॉ. अंबेडकर द्वारा स्थापित शिक्षण संस्थाएँ और समाचार-पत्र

किसी भी समाज को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने हेतु यह आवश्यक है कि उस समाज में पर्याप्त शिक्षण संस्थाएँ और पत्र-पत्रिकाएँ मौजूद हों जो प्रगतिशील विचारों की ध्वजवाहक बन सकें। बाबा साहब डॉ. अंबेडकर ने अपने सामाजिक-राजनीतिक जीवन में शिक्षा की महत्ता को समझते हुए ही वंचित वर्गों से अपने सामाजिक-राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए शिक्षा के महत्व पर ध्यान देने की निरंतर अपील की। डॉ. अंबेडकर ने सबसे पहले *मूक नायक* नाम का समाचार-पत्र 1927 में प्रारंभ किया जो वंचित वर्गों से संबंधित मुद्दों को प्रमुखता से उठता था। इसी वर्ष उन्होंने *बहिष्कृत भारत* नामक एक पाक्षिक मराठी पत्रिका का प्रकाशन करके वंचित वर्ग में स्वाभिमान और जागरूकता का अद्भुत संचार किया। इन पत्रों में उठाए जाने वाले मुद्दों में न केवल समस्याओं को उठाया जाता था, बल्कि उनका तार्किक समाधान भी देने की कोशिश की जाती थी।

डॉ. अंबेडकर ने शिक्षण संस्थाओं में वंचित वर्गों के लिए न केवल पर्याप्त और समुचित प्रतिनिधित्व की वकालत की, बल्कि उनके लिए नए शिक्षण संस्थान और छात्रवास बनाने की भी माँग करते रहे। 'सिद्दार्थ कॉलेज' की स्थापना डॉ. अंबेडकर की शिक्षा नीति का एक प्रमुख पड़ाव माना जा सकता है। 'सिद्दार्थ कॉलेज' की स्थापना बाबा साहब डॉ. अंबेडकर ने वंचित वर्गों में शिक्षा के प्रसार-प्रचार के लिए की थी। 20 जुलाई 1946 को 'पीपुल्स एजुकेशन सोसाइटी' नाम की शिक्षण संस्था की स्थापना बाबा साहब डॉ. अंबेडकर द्वारा शिक्षा को एक जनांदोलन बनाने के उद्देश्य से की गई। इसी संस्था की पहल पर सिद्धार्थ कॉलेज की नींव डाली गई और बाद में उसका विस्तार करते हुए कई कॉलेजों का समूह बनाया गया। शिक्षा को समाज के हर हिस्से तक पहुँचाने की मुहिम में ये कॉलेज आज अग्रणी भूमिका निभा रहे हैं।

डॉ. अंबेडकर का शिक्षा-दर्शन

डॉ. अंबेडकर समाज में संवाद के महत्व को समझते थे, इसलिए उन्होंने जातिगत बंधनों में कैद भारतीय समाज में प्रगतिशील मूल्यों का संचार करने के लिए एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था की वकालत की जो समाज में संवाद को बढ़ावा देती हो और परस्पर विरोधी मतों को बिना किसी टकराव के जगह देती हो। डॉ. अंबेडकर तर्क पर आधारित विचारों को बढ़ावा देने को शिक्षा का उद्देश्य मानते थे।

प्रसिद्ध दार्शनिक जॉन डीवी के शिक्षा संबंधी विचारों से डॉ. अंबेडकर अत्यधिक प्रभावित थे। जॉन डीवी के लोकतंत्र और शिक्षा संबंधी विचारों को भारतीय संदर्भ में समझते हुए डॉ. अंबेडकर ने एक ऐसी शिक्षा नीति की ज़रूरत को बहुत पहले ही महसूस कर लिया था जो शिक्षा के उद्देश्य को महज साक्षरता अभियान तक सीमित न रखकर सामाजिक बदलावों के व्यापक पहलुओं को अपने साथ शामिल करती हो।

सामाजिक अंतर्संवाद एक ऐसा बिंदु है, जहाँ डॉ. अंबेडकर जॉन डीवी से प्रभावित दिखाई देते हैं और उनके इस विचार को भारतीय परिस्थितियों में मूर्त रूप देने की वकालत करते हैं। डीवी (2004) ने सामाजिक अंतर्संवाद को सामाजिक ज़रूरत बताया है और एक गतिशील समाज के लिए यह आवश्यक माना है कि वह अपने सदस्यों को साझा अनुभवों और साझा संस्कृति के प्रति संवेदनशील बना सके। डॉ. अंबेडकर और डीवी, दोनों ही शिक्षा को एक लोकतांत्रिक समाज की स्थापना के लिए आवश्यक मानते थे, जाति-आधारित भेदभावों से बंधे भारतीय समाज में लोकतांत्रिक मूल्यों को स्थापित करने में शिक्षा के महत्व को रेखांकित करते हुए बम्बई विश्वविद्यालय में बोलते हुए बाबा साहब ने कहा था कि —

"मेरी समझ से एक विश्वविद्यालय का मूलभूत कार्य शिक्षा को ज़रूरतमंदों और गरीबों के दरवाजे तक पहुँचाना है ना कि खुद को केवल परीक्षाओं और उपाधियों तक सीमित रखना। एक विश्वविद्यालय को समाज के पिछड़े वर्ग तक शिक्षा का प्रसार करने के लिए समर्पित होना चाहिए और इसके लिए ज़रूरी है कि पिछड़े वर्गों की विश्वविद्यालयों के प्रबंधन में भागीदारी हो।"

डॉ. अंबेडकर के विचार में शिक्षा का उद्देश्य महज़ लोगों को साक्षर करने तक सीमित न रहकर, लोगों को शिक्षा संबंधी नीतियों में पर्याप्त भागीदार बनाने का होना चाहिए। इस संदर्भ में समाज के दलित और पिछड़े वर्ग के प्रतिनिधित्व का शिक्षण संस्थाओं में जब ध्यान रखा जाएगा, तभी उनसे संबंधित नीतियों का भली प्रकार से क्रियान्वन हो सकेगा और एक समावेशी शिक्षण नीति का उद्देश्य पूरा हो सकेगा।

बाबा साहब डॉ. अंबेडकर के लिए शिक्षा का महत्व उनकी पृष्ठभूमि में निहित था। ज्योतिबा फुले को अपना गुरु मानने वाले डॉ. अंबेडकर ने सामाजिक और आर्थिक विषमताओं से झूझते हुए जिस तरह से अति उच्च उपाधियाँ अपनी मेधा के बलबूते प्राप्त की थीं, वे उन्हें शिक्षा में अंतर्निहित सामाजिक बदलावों की संभावनाओं को आगे बढ़ने के लिए सदैव प्रेरित करती रहीं। महात्मा फुले की भाँति

डॉ. अंबेडकर ने प्राथमिक शिक्षा को सबसे महत्वपूर्ण सोपान मानते हुए इसे राज्य की ज़िम्मेदारी बताया कि वह यह सुनिश्चित करे की समाज के हर तबके तक प्राथमिक शिक्षा की पहुँच है। डॉ. अंबेडकर शिक्षा के सामाजिक सरोकारों को समेकित रूप में देखते थे और इसके लिए सरकार द्वारा बजट में पर्याप्त अनुदान की व्यवस्था को आवश्यक मानते थे। डॉ. अंबेडकर ने बजट में शिक्षा के लिए पर्याप्त अनुदान की व्यवस्था हेतु बम्बई विधानमंडल में दिए गए अपने भाषण में स्पष्ट रूप से कहा था कि, "हमें प्राथमिक शिक्षा पर अधिक खर्च करना चाहिए।.... मेरे विचार से यह न्यायोचित होगा कि शिक्षा पर हमारा खर्च इस प्रकार तय किया जाए कि हम लोगों की शिक्षा पर उतना खर्च करें, जितना हम उनसे लेते हैं।"

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में मूलभूत अधिकारों तक से वंचित वर्ग को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए, बाबा साहब शिक्षा को एक प्रभावी माध्यम मानते थे। दलित और पिछड़े वर्ग की चिंताजनक शैक्षिक स्थिति और उसमें सुधार के लिए महात्मा फुले की भाँति राज्य द्वारा विशेष प्रावधान किए जाने की आवश्यकता पर बल देते हुए बम्बई विधानमंडल में डॉ. अंबेडकर ने कहा था कि, "मैं यहाँ केवल इस बात पर जोर देना चाहता हूँ कि यह देश विभिन्न जातियों से मिलकर बना है। इन सभी जातियों का समाज में स्थान और विकास एक समान नहीं है, अगर इन सबको एक स्तर पर लाना है तो इसका एकमात्र समाधान असमानता के सिद्धांत को अपनाना और स्तर से नीचे वालों के प्रति अनुकूल बर्ताव करना है।"

कोल्हापुर के रियासत के तत्कालीन प्रमुख व प्रसिद्ध समाजसेवक छत्रपति शाहूजी महाराज के व्यक्तित्व और कृतित्व की गहरी छाया बाबा साहब के विचारों पर पड़ी थी। शाहूजी महाराज ने अपनी रियासत में शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु आवासीय विद्यालयों की स्थापना में अतुल धनराशि दान की थी और छात्रावासों के निर्माण में भी वो काफ़ी रुचि लेते थे। शाहूजी महाराज का मानना था कि गरीब और पिछड़े तबके से आने वाले बच्चों को रहने और खाने की चिंता से मुक्त किए बिना उनकी शिक्षा पूरी होने की कल्पना बेहद दुष्कर कार्य है। डॉ. अंबेडकर भी इस तथ्य से भली-भाँति परिचित थे कि महज़ विद्यालयों की स्थापना और अभिलेखों में दाखिले के आँकड़े के भरोसे न तो शिक्षा का प्रसार समाज के अंतिम छोर तक हो सकता है और न ही शिक्षा का उद्देश्य पूरा हो सकता है। शाहूजी महाराज से प्रेरणा लेते हुए डॉ. अंबेडकर दलित और पिछड़ी जातियों के बच्चों को छात्रवृत्ति से भी ज़्यादा उन्हें छात्रावास मुहैया कराए जाने पर ज़ोर देते हुए कहते हैं कि —

"मेरे माननीय मित्र और शिक्षा मित्र, मेरी यह बात मान लें कि मेरी पूछताछ और मेरे अनुभव बताते हैं की छात्रवृत्ति देने की जो पद्धति है, वह वास्तव में सरकारी धन की बर्बादी है, मैं माननीय को सुझाव देना चाहता हूँ कि क्या यह बेहतर नहीं होगा कि वह इस धन का उपयोग छात्रावासों की अभिवृद्धि के लिए करें, जिसे या तो सरकार खुद बनाये चलाये या यह काम पिछड़ी जातियों की शिक्षा को बढ़ावा देने वाली निजी संस्था करे।"

यह दुःख का विषय है कि भारतीय शिक्षा-दर्शन से संबंधित पुस्तकों और लेखों में न तो डॉ. अंबेडकर के विचारों को समुचित जगह मिली और न ही शिक्षा नीति अथवा शिक्षा से संबंधित आयोगों में डॉ. अंबेडकर के शिक्षा-दर्शन की विवेचना करने की आवश्यकता समझी गई। जबकि तमाम विदेशी चिंतकों, जिनके विचारों और भारतीय सामाजिक व्यवस्था में कोई साम्य नहीं है, उन्हें शिक्षा नीति में ज़बरदस्ती थोपा जाता रहा। वर्तमान समय की माँग है कि समाज में व्याप्त विषमता को दूर करने के लिए संस्थागत सुधारों के उपाय सुझाने वाले और उनके लिए सर्वस्व समर्पित कर देने वाले ज्योतिबा फुले, शाहूजी महाराज, बाबा साहब अंबेडकर, राम स्वरूप वर्मा जैसे विचारकों के विचारों को पाठ्यक्रमों और शोध में समुचित स्थान मिल सके।

संवैधानिक मूल्य और शिक्षा के सरोकार

भारत के संविधान में नीति-निर्देशक तत्व के अंतर्गत सार्वभौमिक शिक्षा को राज्य का कर्तव्य बनाया गया था, और अनुच्छेद 21(अ) के तहत इसे मूल अधिकार का दर्जा भी दे दिया गया, मगर विविधताओं से भरे भारतीय समाज में शिक्षा का सार्वभौमीकरण नहीं, बल्कि समान स्तरीय सार्वभौमीकरण ज़रूरी है, जिसको हासिल करने में भारतीय राज्य व्यवस्था बुरी तरह से विफ़ल रही है।

बाबा साहब डॉ. अंबेडकर ने संविधान को समावेशी बनाने के दूरगामी दृष्टिकोण के चलते सार्वभौमिक शिक्षा के अलावा अनुसूचित जातियों और जनजातियों की शिक्षा के लिए विशेष प्रयास किए जाने को भी राज्य के नीति-निर्देशक तत्वों में शामिल किया था। अपने सामाजिक और राजनीतिक जीवन में मिले अनुभवों के आधार पर डॉ. अंबेडकर यह बात भली-भाँति समझते थे कि रूढ़ियों और मान्यताओं में जकड़े भारतीय समाज में शिक्षा का प्रचार-प्रसार समाज के अंतिम छोर तक बिना सरकारी सहायता और नीतियों के नहीं हो सकता है। इसीलिए उन्होंने शिक्षा को राज्य की ज़िम्मेदारी मानते हुए यह तय किया कि समाज के वंचित वर्गों तक शिक्षा को पहुँचाने के प्रयास सरकार द्वारा किए जाएँ।

संविधान में निहित ये उपबंध मात्र नीतियों के निर्माण हेतु पथ-प्रदर्शक ही नहीं हैं, अपितु ये हमें संविधान-निर्माताओं के मन में देश के भावी स्वरूप को लेकर कैसी परिकल्पनाएँ रही होंगी, यह समझने में भी सहायता करते हैं। समानता की संकल्पना को भारतीय संविधान में मूल अधिकार के रूप में स्थान दिया गया है। दूसरे शब्दों में, यदि कहा जाए तो समानता का अधिकार भारतीय संविधान की आत्मा है जिसे संविधान-निर्माताओं ने महज़ कानून के ज़रिए लागू करने की कोशिश नहीं की, बल्कि इसके लिए खुद समाज के भीतर ऐसा माहौल बनाने के लिए उपाय सुझाए ताकि भारतीय समाज में हर स्तर पर समानता की संकल्पना थोपी हुई न होकर, एक स्वाभाविक रूप ले सके।

राष्ट्र निर्माण और शिक्षा की भूमिका

बाबा साहब शिक्षा को राष्ट्र निर्माण का प्रमुख आधार मानते थे। भारतीय गणराज्य अपनी स्थापना के पैंसठ वर्ष पूरे कर चुका है और इन वर्षों में भारत ने

एक तरफ़ जहाँ लोकतंत्र, आर्थिक विकास के पहलू पर आशातीत सफ़लता हासिल की है, वहीं लोक-कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को मूर्त रूप देने में अनेक समस्याएँ आज भी नीति-निर्माताओं के सामने पूर्ववत बनी हुई हैं। किसी भी भौगोलिक खंड में रह रहे जनसमूह को राष्ट्र का स्वरूप देने हेतु यह आवश्यक है कि एक साझा संस्कृति, साझा लक्ष्य और संसाधनों के समान वितरण के साथ विकास की रूपरेखा बनाई जाए और इस प्रक्रिया में शिक्षा की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

शिक्षा समाज में ज्ञान और सत्ता के दायरे को समाज के उन वर्गों तक पहुँचाने का सशक्त माध्यम है, जिन्हें समाज के भेदभावमूलक ढाँचे के तहत अपनी रचनात्मक भूमिका से वंचित रखा गया है। शिक्षा की इस भूमिका को समझते हुए ही डॉ. अंबेडकर ने शिक्षा को राज्य का कर्तव्य माना और उसे समाज के हाशिये पर पड़े तबके तक पहुँचाने के लिए विशेष अनुबंध की भी व्यवस्था की, यह राष्ट्र निर्माण के संदर्भ में डॉ. अंबेडकर के संतुलित व तार्किक चिंतन का प्रतीक है। डॉ. अंबेडकर का शिक्षा-दर्शन एक समावेशी और दूरगामी दृष्टिकोण से युक्त अवसंरचना के विकास की वकालत करता है। शिक्षा महज़ रोज़गार देने का माध्यम नहीं होती, यह समाज के समावेशी विकास का पथ-प्रदर्शित करती है। जैसा कि अमर्त्य सेन कहते हैं कि, भारत जैसे विकासशील देशों के लिए शिक्षा भी पोषण का एक माध्यम है, जैसे पोषक तत्वों की ज़रूरत शरीर के समुचित विकास के लिए आवश्यक है, वैसे ही समाज के समुचित और समावेशी विकास के लिए आवश्यक है कि उस समाज में एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था काम कर रही हो जिस तक समाज के हर वर्ग की एक समान पहुँच हो।

निष्कर्ष

कोई भी राष्ट्र तभी मज़बूती से आगे बढ़ सकता है जब उसे ऐसे विचारक मिले जो तमाम विरोधाभासों पर सवाल उठाते हुए भी देश को सबसे ऊपर रखें और देश हित में ही अपने समाधानों को प्रस्तुत करें। यह भारत का सौभाग्य है कि बाबा साहब डॉ. अंबेडकर जैसे विचारक स्वतंत्रता आंदोलन के समय सामाजिक व राजनीतिक समस्याओं पर बौद्धिक आधार व समाधान देने के लिए मौजूद थे। डॉ. अंबेडकर ने देश हित को सदैव ऊपर रखा और देश को एक ऐसा संविधान प्रदान किया जो समाज के हर हिस्से की आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करता है।

वर्तमान समय की आवश्यकताओं को देखते हुए यह ज़रूरी है कि डॉ. अंबेडकर के विचारों का समेकित विश्लेषण किया जाए और राष्ट्र निर्माण में उनके चिंतन और विचारों के महत्व को समझते हुए, उन्हें नीतियों में समुचित स्थान दिया जाए, यही उनकी एक सौ पच्चीसवीं जयंती पर उन्हें एक सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

संदर्भ

जैफ़रलॉट, क्रिस्टोफ़. 2004. *इंडियाज़ साइलेंट रिवोल्यूशन.* परमानेंट ब्लैक, नयी दिल्ली.

डीवी, जॉन. 2004. *शिक्षा व लोकतंत्र.* ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन, नयी दिल्ली.

डॉ. अंबेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय. डॉ. अंबेडकर बम्बई विधानमंडल में, *बाबा साहेब डॉ. अंबेडकर संपूर्ण वाङ्मय खंड 3.* भारत सरकार, नयी दिल्ली.

डॉ. अंबेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय. डॉ. अंबेडकर साइमन कमीशन के साथ, *बाबा साहेब डॉ. अंबेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय खंड 3.* भारत सरकार , नयी दिल्ली.

मुखर्जी, अरुण पी. 2009. 'बी. आर. अंबेडकर, जॉन डीवी, एंड द मीनिंग ऑफ़ डेमोक्रेसी.' *ए न्यू लिटररी हिस्ट्री.* वॉल्यूम 40. नंबर 2. पृ. 345–370.

वेलास्कर,पद्मा. पी. 2009. 'एजुकेशन फ़ॉर लिबरेशन अंबेडकर्स थॉट एंड दलित विमेंस पर्सपेक्टिव.' *कंटेम्परारी एजुकेशनल डायलॉग.* सेज पब्लिकेशन, नयी दिल्ली. पृ. 245–271.

सेन, अमर्त्य. 2015. द *कंट्री ऑफ़ फ़र्स्ट बॉयज़.* ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.